ओ३म्

आर्य प्रतिनिधि

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का पाक्षिक मुखपत्र **मार्च 2018 (द्वितीय)**

Email : aryapsharyana@yahoo.in

Visit us : www.apsharyana.org

श्री रमेश आर्य सभा वेदप्रचार अधिष्ठाता एवं उनकी टीम द्वारा किए गए वेद प्रचार कार्य की झलकियां।

वेद प्रचार मण्डल जीन्द द्वारा आयोजित नव संवत्सर समारोह में उपस्थित आर्य जन।

वेद प्रचार मण्डल जीन्द द्वारा आयोजित नव संवत्सर समारोह में अपने विचार रखते हुए सभा प्रधान मा० रामपाल आर्य।

सृष्टि संवत् 1,96,08,53,118
विक्रम संवत् 2074
दयानन्दाब्द 194

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
की
मुख-पत्रिका

वर्ष 13 अंक 28

सम्पादक :
उमेद शर्मा

पत्रिका-शुल्क

देश में
वार्षिक-200 रुपये आजीवन-2000 रुपये

विदेश में
वार्षिक शुल्क 100 डॉलर
आजीवन 400 डॉलर

पत्रिका का स्वामित्व

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि०)
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ,
गोहाना रोड, रोहतक-124001

सम्पादक-मण्डल

1. आचार्य सोमदेव
2. डॉ० जगदेव विद्यालंकार
3. श्री चन्द्रभान सैनी

सम्पादकीय विभाग

सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक
सम्पर्क सूत्र-
चलभाष : 89013 87993
कार्यालय : 01262-216222

॥ ओ३म् ॥

आध्यात्मिक, सामाजिक, राष्ट्रीय चिन्तन एवं वैदिक जीवन मूल्यों की पाक्षिक पत्रिका

आर्य प्रतिनिधि

मार्च, 2018 (द्वितीय)

16 से 30 मार्च, 2018 तक

इस अंक में....

1. सम्पादकीय.....स्वर्ग कहाँ? 2
2. आत्मचिन्तन 4
3. चॉकलेट खा रहे हैं या बछड़ों का मांस 5
4. आर्यसमाज के महान् सेनानी- स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी 6
5. राष्ट्र के मुख्य छः आधार 8
6. पौराणिक भाइयों से निवेदन 9
7. दो धाराएँ 10
8. देश को आजाद कराने का मन्त्र किसने दिया? 12
9. सत्य सिद्धान्तों से एकता 14
10. शेषभाग-प्रकरण 15
11. समाचार-प्रभाग 16

सूचना

सभी आर्यसमाजों को, आर्य शिक्षण संस्थाओं को सूचित किया जाता है कि अपने सभी प्रकार के प्रचार कार्यक्रमों का विवरण 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक पत्रिका में छापने के लिए भेजें। साथ ही विद्वानों, लेखकों, बुद्धिजीवियों से आग्रह है कि वे अपने लेख, कविता आदि निम्न ई-मेल अथवा पते पर भेजें।

सम्पादक 'आर्य प्रतिनिधि' पाक्षिक
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in
Website : www.apsharyana.org

स्वर्ग कहाँ?

❑ उमेद शर्मा, मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्दमठ, रोहतक

स्वर्ग और नरक क्या है ? यह अवधारणा सभी मनुष्यों, सभी धर्मों में देखने को मिलती है। सभी धर्म अपने-अपने मतानुसार स्वर्ग व नरक की परिभाषा करते हैं। बाइबिल में

ईश्वर के राज को स्वर्ग कहा गया है, जहाँ हीरे माणिक रत्नों की दीवारों से निर्मित भवन, सोने की सड़कें ऐशो-आराम के सभी साधन विद्यमान हैं, स्वर्ग में परमेश्वर का सिंहासन है, जिसे चार फरिश्ते उठाए हैं। इस प्रकार अपने तरीके से बाइबिल में स्वर्ग की परिभाषा भिन्न-भिन्न प्रकार से की गई है। इसी प्रकार कुरान में स्वर्ग को बहिश्त कहा है। जहाँ शहद की नदियाँ बहती हैं, सदा युवा रहने वाले लड़के-लड़कियाँ तथा सभी आमोद-प्रमोद के साधन हैं। उनके लिए स्वर्ग किसी स्थान विशेष के ऊपर है। स्वर्ग की स्त्रियों को हूर और अप्सरा कहा जाता है। स्वर्गद्वार स्वर्ग के दरवाजे को कहते हैं। कुछ ऐसी ही कल्पना पुराणों में भी की गई है। जहाँ कामधेनु गाय और कल्पवृक्ष सभी कामनाओं को पूर्ण करते हैं और सभी प्रकार के सुख उपलब्ध हैं। इस स्थान को वे एक स्वर्गलोक और स्थान विशेष की ओर संकेत करते हैं। इन सभी मतावलम्बियों की धर्मपुस्तकों में स्वर्ग पृथ्वी से दूर कहीं आसमान में स्थान विशेष का नाम है, जहाँ पुण्यात्मा जाकर स्वर्ग भोगती हैं। इसके अतिरिक्त पापकर्म करने वालों को नरक की अग्नि में जलना पड़ता है। नरक में भी कहीं अंधकार पूर्ण निम्न और सुविधा रहित स्थान की कल्पना की गई है और पाप कर्म करने वाले व्यक्ति को नाना प्रकार के कष्ट दिए जाते हैं। वह व्यक्ति वहाँ पर अनेक कष्ट भोगता है। इस प्रकार बौद्ध धर्म के मानने वाले इस शरीर के अन्दर स्वर्ग का वास मानते हैं। परन्तु वेद आदि शास्त्रों में स्वर्ग का वर्णन अन्य प्रकार से किया है जिसके अनुसार स्वर्ग व नरक किसी दूसरे आकाश, पाताल या स्थान विशेष का नाम न होकर इसी पृथ्वी पर विराजमान है और इसी जीवन में प्राप्त किया जा सकता है।

'सुवर्गच्छतीति स्वर्गः अस्वर्गमयतीति स्वर्गः' जो सुख विशेष की प्राप्ति कराये उसे स्वर्ग कहते हैं अथवा जहाँ सुखविशेष के साधन उपलब्ध हों, उसे स्वर्ग कहा जाता है। स्वामी दयानन्द जी ने स्वमन्तव्यामन्तव्य में स्वर्ग का लक्षण बताते हुए कहा है—स्वर्ग नाम विशेष भोग और उसकी सामग्री की प्राप्ति का है तथा नरक इसके विपरीत दुःखविशेष भोग और उसकी सामग्री का प्राप्त होना है। नरक का कारण पाप कर्म होते हैं, पाप स्वयं नरक की अग्नि है। अनृत कथन करने वालों तथा असत्यवादियों ने इस गहरे स्थान को बनाया है। फिर भी यदि कोई नरक को स्थान विशेष पर माने तो यह उसकी अविद्या है। वेदों में कहा है कि पापी अपने पतन का गड्ढा स्वयं खोदता है। उस पर धरती आकाश क्रोधक वर्षा करते हैं। वह चुपचाप पतन के गड्ढे में गिरता है। पापी को मारने के लिए पाप महाबली है। उसका अपना शरीर तथा संतान तक साथ नहीं देते। वह स्वयं उनका शत्रु बनता है। उस दया करना पाप को बढ़ावा देना है। अत्याचारी एवं पापी ईश्वर के तेज में अचेत सोते हैं।

जब स्वर्ग इस पृथ्वी पर है तो वह किसी स्थान विशेष तीर्थस्थल या किसी महापुरुष के जन्मस्थान या किसी विशेष लोक अथवा कहीं अन्यत्र स्थित है। इसका अन्वेषण करने पर ज्ञात होगा कि स्थान विशेष में यदि स्वर्ग विद्यमान हो तो उस स्थान पर रहने वाले सभी सुखी देखे जाते। परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं देखा जाता। वस्तुतः स्वर्ग कहाँ है ? हमें यह देखना होगा। इसके लिए ऋषियों ने वैदिक धर्म में वर्णित इन चार आश्रमों का विधान किया है। संसार के अन्य किसी भी मत-मतान्तर में जीवन का यह वैज्ञानिक वर्गीकरण नहीं पाया जाता। यह वैदिक विचारधारा की महान् विशेषता है। तो वस्तुतः चार वर्ण और चार आश्रम ही स्वर्ग के सोपान हैं। चार वर्णों की जहाँ तक बात है यह प्राचीन गुरुकुलों में विद्यार्थी की योग्यता अनुसार दी जाने वाली उपाधियाँ या वर्ण हैं। आश्रमों में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास चार आश्रम हैं। ब्रह्मचर्य आश्रम में ब्रह्मचारी वीर्य का संचय करता है वह शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आत्मिक शक्तियों को इकट्ठा करता है। यह मानो उसका संग्रहकाल है। ब्रह्मचारी गृहस्थ आश्रम में

प्रवेश करके इन इकट्ठी की गई शक्तियों को घटाता है। वह अपनी इन संग्रहित शक्तियों को गृहस्थ के विभिन्न कामों में खर्च करता है। पच्चीस वर्ष तक निरन्तर अपनी शक्तियों को आजीविका, पत्नी, सन्तान सम्बन्धी जन और गृहस्थ के अन्य कार्यों में खर्च करने के पश्चात् वह गृहस्थ वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करता है। तब वह अपनी खर्च की हुई शक्तियों को ब्रह्मचर्य, स्वाध्याय, जप एवं तप के द्वारा गुणीभूत करता है। इन शक्तियों को गुणीभूत करते हुए मानो वह एक महान् उद्देश्य की तैयारी करता है। जब तैयारी पूरी होती है तब वह अपने संग्रहित ज्ञान-विज्ञान एवं अनुभव को समाज में बांटने के लिए कृतसंकल्प हो जाता है। यही उसके संन्यास आश्रम की दीक्षा है। आश्रमों में ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास तीनों तप व आत्मानुशासन के आश्रम हैं। ये तीनों गृहस्थ आश्रम पर निर्भर हैं। अब केवल गृहस्थ आश्रम ही अवशिष्ट रह गया है जिसमें स्वर्ग की तलाश करनी होगी। मनुस्मृति कहती है—

यथा नदि नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्॥

अर्थात् जैसे सब बड़ी और छोटी नदियाँ सागर में जाकर स्थिर होते हैं, वैसे ही सब आश्रमों का गृहस्थ ही आधार है। सुखी गृहस्थ का वर्णन करते हुए वेद ने कहा है—जो कुल के विस्तार का यज्ञ करते हैं, समय उनकी शक्ति को क्षीण नहीं होने देता। ऐसा व्यक्ति गृहस्थ होकर अपनी आश्रमों के कर्त्तव्यों को भलीभांति पूर्ण करता हुआ अपनी उड़ान से प्रकाश लोक की सैर करता है। गृहस्थी यज्ञों में यह विस्तृत तथा महान् यज्ञ है। कुल के विस्तार का यज्ञ करके मनुष्य स्वर्ग में प्रविष्ट होता है। इस कुल के विस्तार के यज्ञ को संसार में प्राप्त स्वर्ग पर आधारित करता हूँ। मेरा यह यज्ञ नष्ट न हो। आत्मनिर्भरता की शक्ति से हरा-भरा रहे। यह यज्ञ मेरी सब रूप धारण करने वाली कामधेनु बनी रहे। ऋषियों ने गृहस्थ आश्रम को सबसे बड़ा यज्ञ कहा है, क्योंकि उस पर कुल का आधार है। वैसे तो प्रत्येक यज्ञ के पुरोहित ब्राह्मण होते हैं, परन्तु गृहस्थ का कोई कर्त्तव्य देवों की सहायता तथा पथ-प्रदर्शन के बिना पूरा नहीं होता। यदि गृहस्थ आश्रम में संयम का अर्थ समझा जाये तो कुल बढ़ता है और सभी इच्छाओं की पूर्ति होती है। गृहस्थ में संयम से रहना बहुत बड़ा तप है। जिस तप से शारीरिक, आत्मिक तथा बौद्धिक उन्नति के प्रयास को सफलता मिलती है। गृहस्थी ही अपनी कमाई से दान कर सकता है। क्योंकि दानी लोग ऊँचे प्रकाश के लोकों को प्राप्त होते हैं, वे भाग्यशाली हैं। रोटी देने वालों की आयु दीर्घ होती है। ब्राह्मण आत्मिक ज्ञान का दाता है। क्षत्रिय घोड़े इत्यादि जो वीरता का चिह्न है, अन्य लोग रोटी कपड़ा दे सकते हैं, दान देना सबसे बड़ा सुख का कार्य है। जो स्त्री-पुरुष दान का आरम्भ कर अच्छी प्रकार से इसे निभाते हैं वे मानो अग्नि में डाली हुई आहुति के समान है।

विवाह के समय पति-पत्नी यज्ञ करते हैं। यह जैसे गृहस्थ के कर्त्तव्यों की पूर्ति का प्रण होता है। गृहस्थ के कर्त्तव्य पालन के लिए उदारता की आवश्यकता होती है, आपसी प्रेम तथा संगठन की आवश्यकता होती है। इस गृहस्थ आश्रम को ही स्वर्ग कहा गया है, परन्तु वह है यहीं। मनु ने भी कहा है—

सः संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखं चेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥

अर्थात् अक्षय सुख अर्थात् मोक्ष की कामना करने वाले स्त्री-पुरुषों को प्रयत्न पूर्वक गृहस्थ आश्रम को धारण करना चाहिए। परन्तु जो दुर्बल इन्द्रियाँ और निर्बुद्धि हैं उन्हें गृहस्थ आश्रम धारण नहीं करना चाहिए। क्योंकि गृहस्थ आश्रम सुख का मूल है। इस विषय में अथर्ववेद कहता है—

यत्रा सुहार्दः सुकृतो मदन्ति विहाय रोगतन्वः स्वायाः।
अश्लोणा अंगा अह्रुताः स्वर्गे तत्र पश्येम पितरौ च पुत्रान्॥

अर्थात् जहाँ सहृदय जन शुभकर्मों को करने हारे अपने शरीर का रोग त्याग कर आनन्द भोगते हैं, जिस परिवार में कोई हीन अंग या अधिक अंगों वाला नहीं हो वहाँ माता-पिता और पुत्रों को देखें। मन्त्र में यह सुखी परिवार का चित्र प्रस्तुत किया है। जिस परिवार में कोई रोगी या विकलांग न हो, जहाँ वृद्ध माता-पिता और पुत्र-पुत्रियाँ हों और सर्वविद् आनन्द प्रसन्नता हो, उसे स्वर्ग कहते हैं। इसी प्रकार परमात्मा में ध्यानमग्न होने से भी सुख की प्राप्ति होती है। अतः अथर्ववेद पुनः कहता है—

अष्टा चक्रा नव द्वारा देवानां पूरयोद्धा।
तस्यां हिरण्यये कोशे स्वर्गो ज्योतिषावृतः॥

शेष पृष्ठ 15 पर....

आत्मचिन्तन

❑ रमेश मुनि ऋषि उद्यान, अजमेर (राजस्थान)

हमने कभी यह जानने या समझने का प्रयत्न किया है कि हमें यह शरीर किसने दिया है, क्यों दिया है, जगत् में असंख्य योनियाँ क्यों हैं ? यह भेदभाव दिखाई देता है किसी को मानव किसी को पशु, पक्षी, कीट-पतंग आदि बनाया है। मानवों में भी कोई अमीर है कोई गरीब, कोई बुद्धिमान् है कोई निर्बुद्धि, कोई अपङ्ग है और कोई पूर्णाङ्ग है।

जगत् में हम भूल-भुलैया शब्द सुनते हैं और इस शब्द से ही पता चलता है कि इसमें प्रवेश करने वाला अन्दर जाते समय थोड़ा भी असावधान होगा तो भूल-भुलैयों में भटक जाएगा और बाहर निकलना कठिन हो जाएगा किन्तु भूल-भुलैया बनाने, चलाने वाले इस बात को जानते हैं। इसलिए इसमें भटकन से बचाने के लिए कुछ निशान लगाये जाते हैं, कुछ नियम होते हैं, यदि अपनी बुद्धि का प्रयोग करके निशान मन में रखे जाएं, नियमों का पालन करते हैं तो भटकने से बच सकते हैं। इसके साथ-साथ इसमें कुछ पहरेदार भी होते हैं जो मार्ग का निर्देश कर देते हैं।

मानव जाति के लिए यह संसार भी भूल-भुलैया है। इसमें प्रवेश ईश्वर कराता है, जो जीवों के द्वारा किए गये कर्मों के फल के रूप में होता है। किन्तु ईश्वर ने इसमें भी नियम बनाये हैं, यदि हम उन लक्षणों को नियमों को याद रखते हैं, उनका पालन करते हैं तो इस भवसागर से पार हो जायेंगे अन्यथा संसार में जन्म-मरण के चक्कर काटते रहेंगे। जैसे भूल-भुलैयों में कुछ पहरेदार रखे होते हैं जो भूले-भटके यात्री को बाहर जाने का रास्ता बताते हैं। इसी प्रकार से परमेश्वर ने भी इस संसार रूपी भूल-भुलैया में पहरेदार रखे हैं, वे पहरेदार वेद, ऋषिग्रन्थ या योगी लोग हैं जो बाहर निकलने का सही रास्ता बताते हैं कि ऐसा करो, ऐसा न करो, इधर चलो, ऐसे चलो। यदि उनके द्वारा बताए मार्ग पर चल पड़ेंगे तो पार हो जायेंगे। यदि उनकी नहीं सुनी, नहीं मानी और अपने अक्ल का प्रयोग करके दूसरा रास्ता बनाने का प्रयत्न किया तो जन्म-मरण के चक्कर काटते रह जायेंगे।

पिछले जन्मों में किए हुए कर्म और भोगे हुए कष्ट हमें याद नहीं रहते, सब कुछ नया ही लगता है। यदि पिछले दुःख या कष्ट जो भोगे हैं, याद रहे कि कहाँ-कहाँ कितनी पिटाई हुई, कितने कष्ट झेलने पड़े, कितने विरोध या प्रतिकूलताएँ मिलीं और अब नए लगने वाले समय में भी सब कुछ ऐसा ही मिलना है। यदि पिछला याद रहे तो दुःख कष्ट देने वाले कर्मों को न करें या उन विषयों को न पकड़ें। याद न रहने के कारण उन्हीं कार्यों को करते हैं, उन्हीं विषयों को पकड़ते हैं। हमारे ऋषि-मुनियों ने अपने पुरुषार्थ द्वारा अभ्यास करके जो प्राप्त किया, जो जाना है, वे सभी अनुभव बताये हैं तथा मानव के द्वारा करने योग्य और छोड़ने योग्य कर्म, विषय और मार्ग बताये हैं, लेकिन फिर भी हम—'**अनित्या-शुचिदुःखानामत्सु नित्यशुचिसुखा-त्मख्यातिरविद्या**' (यो० 2/5) अर्थात् अशुचि को शुचि, दुःख को सुख, अनित्य को नित्य और जड़ को चेतन मान रहे हैं, जो अविद्या है। हमने दिल्ली जाना है, जाने के सड़क मार्ग बना हुआ है किन्तु हम उस पर नहीं चलते और विचार करते हैं एक नया अपना मार्ग बनाकर जायेंगे, लेकिन जो नहीं बन पाएगा। हमें ऋषियों द्वारा बनाए ग्रन्थों का स्वाध्याय कर कुमार्ग से बचें। ग्रन्थों को समझकर उसी के अनुसार अपना आचरण बना लेंगे तो सफलता मिल सकती है। ये ऋषिग्रन्थ जगत् में पहरेदार हैं, जो इस भवसागर के चक्रव्यूह से निकलने का सही मार्ग बताते हैं। चक्रव्यूह से निकलने के लिए इसमें प्रवेश करना, इसका भेदन करना और फिर बाहर निकलना आवश्यक है। इनमें से एक का ज्ञान न होने पर भी बाहर निकलना कठिन है। जैसे महाभारत युद्ध में अभिमन्यु बाहर निकलने के ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण मारा गया।

यदि इन ऋषि ग्रन्थों पर पक्का विश्वास करके इन्हीं के निर्देश अनुसार पुरुषार्थ करेंगे तो कुछ समय तक पुरुषार्थ करने पर कुछ अनुभूति प्राप्त होने लगती है, अनुभव होने लगता है कि कुछ मिल रहा है। पहले यह जान लेना आवश्यक होता है कि हमें अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए किन-किन विषयों को जान लेना आवश्यक है और किनको जानना आवश्यक नहीं है। इससे अनावश्यक विषयों का चिन्तन करके समय को व्यर्थ नहीं करेंगे। आवश्यक विषयों पर चिन्तन करने से परिश्रम उचित होगा।

अपने लक्ष्य '**जन्म-मरण के बन्धन से छूटना**' की प्राप्ति के लिए ईश्वरप्रणिधान करना बनाना आवश्यक है, इससे ईश्वर की सहायता से चिन्तन करने पर अवान्तर विषय सामने आयेंगे जिन्हें जानना पड़ेगा और जानने योग्य विषय अपने आप आते जायेंगे। जब हम चिन्तन ईश्वर का करेंगे तो आत्मा, प्रकृति और प्रलय आदि विषय अपने आप आते जायेंगे और धीरे-धीरे इनकी अनुभूति होने लगती है। विद्वानों ने कहा है—

विषयों का विष जब डसे 'ओ३म्' जड़ी को चबा।
है नागदमन यह औषधि ढूंढ़ने दूर न जा॥

जगत् में हमारा व्यवहार स्मृति से चलता है। यह स्मृति न हो तो कार्य व्यवहार चलेगा ही नहीं। जब मन के द्वारा इन्द्रियों का विषयों के साथ सन्निकर्ष किया जाता है, इससे उस विषय की मन पर जो छाप पड़ती है, वही स्मृति है। किसी विषय के महत्त्व को जानकर उस पर विचार करना आसान हो जाता है। स्मृति कितनी महत्त्वपूर्ण वस्तु है, प्राय: हम इस पर विचार नहीं करते। जब किसी की स्मृति दुर्बल हो जाती है, भूलने लगता है, इसके महत्त्व का पता फिर चलता है और यह महत्त्वपूर्ण वस्तु हमें किसने दी है, उसे क्यों नहीं जानना चाहिए कि वह स्वयं कितना महत्त्वपूर्ण होगा। प्राय: देखा जाता है कि देने वाला अपना सब कुछ नहीं दे देता, कुछ तो अपने पास बचाकर रखता ही है। विचार करें, उसको पास और कितना कुछ होगा और वह कितना महत्त्वपूर्ण होगा। यदि हमें कोई कार्य करना होता है, उसके लिए कितनी बुद्धि लगानी पड़ती है, इससे हम कितने बुद्धिमान् हैं, पता चलता है, क्योंकि बुद्धि और बल के प्रयोग के बिना कार्य नहीं हो पाएगा।

जगत् या ब्रह्माण्ड में क्या कुछ और कितना कुछ बना हुआ है हम गिनती नहीं कर सकते। इन्हें बनाने में कितनी बुद्धि और परिश्रम करना पड़ा होगा। इसकी तुलना अपने द्वारा छोटे से कार्य के करने पर कितनी बुद्धि और बल लगाना पड़ता है, इससे करके देखनी चाहिए। जगत् में असंख्य आकाशगंगाएं और एक आकाशगंगा में अरबों सौरमण्डल बनाए गए हैं। इन सभी का धारण रक्षण हो रहा है इसके लिए कितनी बुद्धि, बल का प्रयोग लगातार हो रहा है, ऐसा विचार करके चिन्तन करें तो समझ में आएगा ये सभी किसने बनाए हैं, कौन धारण रक्षण कर रहा है और ईश्वर की सत्ता उसकी बुद्धि बल के बारे में मानना पड़ेगा। ईश्वर के प्रति श्रद्धा भाव उत्पन्न होगी और ईश्वर प्रणिधान बनाने में सफलता मिलने लगती है और ईश्वर प्रणिधान से सब कुछ जाना जा सकता है।

यदि ईश्वर, जीव और प्रकृति को जानना, अनुभव करना है तो महर्षि पतञ्जलि कृत योगदर्शन के समाधिपाद का दूसरा सूत्र '**योगश्चित्तवृत्तिनिरोध:**' चित्त की वृत्तियों के निरोध से समाधि लगती है जिसमें ईश्वर, जीव और प्रकृति की अनुभूति होती है।

चॉकलेट खा रहे हैं या बछड़ों का मांस?

चॉकलेट का नाम सुनते ही बच्चों में गुदगुदी न हो, ऐसा हो ही नहीं सकता। बच्चों को खुश करने का एक प्रचलित साधन है चॉकलेट। बच्चों में ही नहीं, वरन् किशोरों तथा युवा वर्ग में भी चॉकलेट ने अपना विशेष स्थान बना रखा है।

'**गुजरात समाचार**' में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार '**नस्ले यू.के. लिमिटेड**' द्वारा निर्मित '**किटकेट**' नामक चॉकलेट में कोमल बछड़ों के रेनेट (मांस) का उपयोग किया जाता है। किटकेट बच्चों में खूब लोकप्रिय है। अधिकतर शाकाहारी परिवारों में भी इसको बड़े चाव से खाया जाता है। नेस्ले यू.के. लिमिटेड की न्यूट्रिशन ऑफिसर श्रीमती बाल एंडर्सन ने अपने एक पत्र में बताया कि किटकेट के निर्माण में कोमल बछड़ों के रेनेट (मांस) का उपयोग किया जाता है। फलत: किटकेट शाकारियों के खाने योग्य नहीं है। इस पत्र को अन्तर्राष्ट्रीय पत्रिका 'यंग जैन्स' में प्रकाशित किया गया था। टेलीविजन पर अपने उत्पादों को शुद्ध दूध से बनते हुए दिखाने वाली नेस्ले लिमिटेड के इस उत्पाद में दूध तो नहीं, परन्तु दूध पीने वाले अनेक कोमल बछड़ों के मांस की कुछ मात्रा अवश्य होती है। हमारे धन को अपने देश में ले जाने वाली ऐसी अनेक विदेशी कम्पनियाँ व्यापार तथा उदारीकरण की आड़ में भारतवासियों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ कर रही हैं। सन् 1857 में अंग्रेजों ने कारतूसों में गाय का चर्बी का प्रयोग करके भारतीय संस्कृति को नष्ट करने की साजिश की थी। परन्तु भारतीय सैनिकों ने उसे विफल कर दिया था। अब वैसे वीरों की जरूरत है। भारतीय संस्कृति की सेवा में सबको साहसी बनना चाहिए। ऐसे हानिकारक उत्पादों के उपयोग को बन्द करके ही हम अपनी संस्कृति की रक्षा कर सकते हैं। इसलिए ऐसी कम्पनियों के उत्पादों के बहिष्कार का संकल्प लेकर भारतीय संस्कृति की रक्षा में हमें आगे आना चाहिए।

परोपकारी पत्रिका पाक्षिक मार्च द्वितीय 2014 के पृष्ठ नं० 16, '1857 की क्रान्ति' के ऐतिहासिक दस्तावेज लेखक 'विरजानन्द दैवकरणि' द्वारा।

संकलन—भलेराम आर्य, सांघी वाले (रोहतक)

आर्यसमाज के महान् सेनानी स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी

❑ कन्हैयालाल आर्य, उपप्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, रोहतक

आर्यसमाज को लुधियाना (पंजाब) ने महान् दार्शनिक स्वामी दर्शनानन्द जी, राष्ट्रवीर लाला लाजपतराय जी, प्रसिद्ध देशभक्त एवं विचारक स्वामी सत्यदेव परिव्राजक, वीर करतार सिंह सराबा दिये परन्तु यदि स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी की चर्चा न की जाये तो यह हमारी कृतघ्नता होगी।

पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय जी ने इनके बारे में कहा था कि 'दूर तक देखने व गहरा सोचने की अद्भुत शक्ति के वे स्वामी थे।' वे न केवल ज्ञानी थे बल्कि एक अद्भुत बलिदानी, सेनानी, साधक, प्रबन्ध पटु, आचार्य, गवेषक, इतिहासवेत्ता, स्वतन्त्रता सेनानी, गुणियों के पारखी एवं मानव निर्माण कला के चतुर शिल्पी थे।

जिन पुण्यात्माओं को जन्म देकर यह भारत भूमि धन्य हो गई, उनमें से एक हमारे चरित-नायक पूज्यपाद स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज भी थे।

आपका जन्म लुधियाना जिले के मोही ग्राम में संवत् 1934 के पौष मास की पूर्णिमा (सन् 1877 ई०) को एक प्रतिष्ठित सिख जाट परिवार में हुआ। आपके पिताजी का नाम भी भगवान सिंह एवं माता का नाम श्रीमती समय कौर था। आपके बचपन का नाम केहर सिंह था जिसका अर्थ है सिंहों का सिंह। स्वामी जी महाराज की जीवन-गाथा इस बात की साक्षी है कि आपने अपने कुल द्वारा दिए गए इस नाम को सार्थक कर दिया। केहरसिंह जब बहुत छोटा था कि अपनी माँ की छत्रछाया से वंचित हो गया। अब आपका लालन-पालन आपके ननिहाल लताला ग्राम में आपकी नानी श्रीमती महाकौर जी ने बड़े लाड़-प्यार से किया। स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी का जन्म जिस वर्ष 1877 में हुआ था उसी वर्ष पंजाब में आर्यसमाज की स्थापना हुई थी।

शिक्षा-आपकी प्रारम्भिक शिक्षा अपने ग्राम एवं ननिहाल लताला ग्राम में हुई। कुछ जालन्धर के विक्टर स्कूल व पिता के संग पेशावर आदि छावनियों में हुई। आपने स्कूल शिक्षा मिडल तक प्राप्त की। उदासीन अखाड़े के साधुओं तथा पं० विशनदास जी की प्रेरणा से संस्कृत पढ़ी। पं० लेखराम के साहित्य के स्वाध्याय से एवं ऋषि दयानन्द के विचारों से प्रेरणा लेकर पं० विशनदास जी वैदिक धर्म के दृढ़ अनुयायी बन गये। इन्हीं पं० विशनदास जी के सत्संग से केहरसिंह पर भी वैदिक धर्म का रंग चढ़ गया। आपने यूनानी व आयुर्वेदिक चिकित्सा शास्त्र का भी अध्ययन किया।

गृहस्थ से छुटकारा एवं संन्यास दीक्षा-उस युग की प्रथानुसार बाल्यकाल में ही आपका विवाह कर दिया गया। थोड़े ही समय में नव-वधू की मृत्यु हो गई। आपने गृहस्थ आश्रम में प्रवेश भी नहीं किया था कि गृहस्थ से छुटकारा मिल गया। आपने 22 वर्ष में (दिसम्बर 1900) गृह त्याग दिया और 1901 में स्वामी पूर्णानन्द जी से संन्यास की दीक्षा ली और प्राणपुरी नाम पाया।

पिता सेना में जरनैल/कर्नल बनाना चाहते थे-आपके पिता श्री भगवान सिंह आपको अपनी कुल परम्परा के अनुसार सेना में भर्ती कर जरनैल/कर्नल बनाना चाहते थे परन्तु यह सिंह सेना का जरनैल न बनकर राष्ट्र एवं समाज का सिरमौर बन गया। आपकी युक्तियाँ एवं प्रमाण सुनकर लोग आपको 'स्वतन्त्र स्वामी' कहने लगे। इस प्रकार धीरे-धीरे आपका नाम स्वामी स्वतन्त्रानन्द पड़ गया।

विदेश यात्रा-किसी संस्था व सहयोग के बिना ही आपने 1901 में कलकत्ता की बन्दरगाह से जलपोत पर सवार होकर विदेशों मलेशिया, फिलीपीन्स द्वीप समूह, इण्डोनेशिया व चीन आदि देशों का भ्रमण किया। तत्पश्चात् 1904 में स्वदेश लौट आये।

पैदल भ्रमण-विदेश से लौटने के पश्चात् 1906 से 1909 तक भारतवर्ष की पैदल यात्रा की। धर्मवीर पं० लेखराम जी के पश्चात् महर्षि दयानन्द जी के जीवन की सामग्री की खोज में निलकने वाले प्रथम विद्वान् थे।

वैद्यक कार्य छोड़ने का कारण-गृह त्याग से पूर्व आपने यूनानी व आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति का गहरा अध्ययन किया था। आप धर्मोपदेश के साथ-साथ रोगियों का उपचार भी करते थे। एक बार मालवा प्रदेश के ग्राम बाजारवाना (भटिण्डा के पास) गुरुद्वारे में आसन लगाया हुआ था। ग्रीष्म ऋतु थी। एक दिन कड़कती धूप में दोपहर

के दो बजे एक युवा स्त्री को गुरुद्वारे की ओर आते देखा। वह स्त्री जान-बूझकर स्वामी जी के शरीर सौष्ठव से प्रभावित होकर वासना के वशीभूत होकर आ रही थी। स्वामी जी ने ऊँचे स्वर में कहा, ''माता, तू इस समय अकेली क्यों आई है ? लौट जा यहाँ से।'' परन्तु उसकी दूषित प्रवृत्ति को जानकर उसे कहा, ''जिससे अनेक लोगों का उपकार होना था, मैं उस वैद्यक को तेरे कारण आज से छोड़ता हूँ परन्तु ब्रह्मचर्य व्रत को खण्डित नहीं कर सकता।''

आर्यसमाज की सेवा में पदार्पण-भारत भ्रमण से लौटकर पं० विशनदास की जी प्रेरणा से आर्यसमाज के लगभग सभी महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का अध्ययन कर लिया। आर्यसमाज मोगा के उत्सव में भाग लिया। यह आर्यसमाज का पहला उत्सव था जिसमें आपने भाग लिया। धर्मप्रचार करते हुए आप गुरु की काशी (दमदमा साहिब) 'तलवण्डी साबो' पधारे। आपने रामा मण्डी को केन्द्र बनाकर राष्ट्रभाषा प्रचार, समाज-सुधार, वेदप्रचार व युवक निर्माण का ऐतिहासिक कार्य किया। सेवा करते हुए वसन्त के पर्व पर आर्यसमाज सिरसा में शंका-समाधान कर अपना प्रथम व्याख्यान दिया। पं० लेखराम जी के बलिदान दिवस 6 मार्च 1912 ई० को आपने लुधियाना में 'वेदप्रचारिणी पाठशाला' की स्थापना करके आर्यों में उत्साह का संचार कर दिया।

दूसरी विदेशी भाषा-डॉ० चिरञ्जीव भारद्वाज जी ने अपनी लगन व उत्साह से अफ्रीका महाद्वीप के मॉरीशस नामक देश में वेद का प्रचार किया। मॉरीशस में आर्यसमाज एक शक्तिशाली संगठन के रूप में उभरकर सामने आया। डॉ० भारद्वाज जी की प्रेरणा एवं पंजाब आर्य प्रतिनिधि सभा के महाशय कृष्ण जी ने मॉरीशस में वेदप्रचार हेतु स्वामी जी को उचित पात्र समझा। 1914 में स्वामी जी मॉरीशस पहुँच गये। आपके त्याग भाव, शान्त स्वभाव एवं सदाचार का वहाँ बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। उनके जाने से पूर्व मॉरीशस में केवल 13 आर्यसमाजें थीं और स्वामी जी ने 45 आर्यसमाजें और स्थापित कर 58 की संख्या तक पहुँचा दिया। सन् 1920 में आप वेदप्रचार हेतु बर्मा गए और वहाँ पर स्वराज्य आन्दोलन के लिए कार्य किया। सन् 1921 में आपको पूर्वी अफ्रीका में वैदिक प्रचारार्थ निमन्त्रित किया गया।

कार्यक्षेत्र-आपने मथुरा शताब्दी में बढ़-चढ़कर भाग लिया। लाहौर में उपदेशक विद्यालय की स्थापना की। स्वामी श्रद्धानन्द जी से मिलकर डेढ़ लाख मुसलमानों को शुद्ध किया। दीनानगर, डिकसाई, धर्मशाला, जालन्धर, रोहतक में दयानन्द मठों की स्थापना की। हैदराबाद सत्याग्रह के आप नेता रहे। लुहारू सत्याग्रह में आपने लाठियाँ खाईं।

मॉरीशस से लौटे तो लोकमान्य तिलक के होमरूल में बढ़चढ़कर भाग लिया। मार्शल-ला लागू हो गया था परन्तु कांग्रेस ने जहाँ पीड़ितों की सहायता करने के लिए भेजा, वहाँ गये। कई क्रान्तिकारियों को गुरुदत्त भवन में शरण देकर अंग्रेस सरकार के कोप से बचाया। पंजाब कांग्रेस के एक उत्सव में क्रान्तिकारी वाक्यों पर आपको बन्दी बना लिया गया। आपको पंजाब के राज्यपाल की हत्या के षड्यन्त्र में आरोपी बनाया गया। जेल से छूटते ही पंडित जी को साथ लेकर हरयाणा के कई नगरों में वेदप्रचार किया।

सन् 1920 में आप जब बर्मा गये तो वहाँ माण्डले की ईदगाह में स्वराज्य सम्बन्धी एक विशाल सभा को आपने सम्बोधित किया। यह सम्मान फिर किसी राष्ट्रीय नेता को नहीं मिला। सन् 1942 में 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में आपको सेना में विद्रोह फैलाने का दोष लगाकर लाहौर के शाही किले में आपको भयंकर यातनायें दी गई। सेना में विद्रोह फैलाने का दोष भी केवल एक ही साधु पर लगा और वे थे हमारे चरित-नायक स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी।

स्वामी जी ने राष्टभाषा प्रचार के लिए बड़ा कार्य किया। वे अंग्रेजी राज्य में अंग्रेजी में अपने पत्रों पर पता नहीं लिखते थे, केवल राष्ट्रभाषा में लिखते थे। मॉरीशस व पूर्वी अफ्रीका के देशों में आपके शिष्यों ने राष्ट्रभाषा के प्रचार-प्रसार के लिए बहुत कार्य किया। आप 'पंजाब प्रान्तीय हिन्दी साहित्य सम्मेलन हिसार' के प्रधान चुने गये। स्वामी जी राष्ट्र को बलवान व तेजस्वी देखना चाहते थे। उन्होंने देश का विभाजन रोकने के लिए बड़ा यत्न किया। दूरदर्शी संन्यासी ने यह देख लिया था कि अपनी तुष्टिकरण की नीति के कारण (जो आज तक भी है) कांग्रेस देश का विभाजन मान लेगी। अस्पृश्यता निवारण के लिए आपने पंजाब, हरयाणा, हिमाचल व जम्मू-काश्मीर में बड़ा संघर्ष

क्रमशः पृष्ठ 15 पर......

राष्ट्र के मुख्य छः आधार

❑ राजेन्द्रप्रसाद सिंह, गुरुकुल कांगड़ी, हरिद्वार

सत्यं बृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्मयज्ञः पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य पत्न्युरुं लोकं नः कृणोतु॥

अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त का यह प्रथम मन्त्र है। इसमें पृथ्वी को या राष्ट्र को धारण करने वाले छः श्रेष्ठ गुणों का तथा कर्मों का वर्णन किया गया है। राष्ट्र को धारण करने का अभिप्राय उसकी स्वतन्त्रता एवं शान्ति का स्थिर रहना है। यदि राष्ट्र का एक-एक व्यक्ति अथवा परिवार अपने आपको सुखी अनुभव करता है। चोरों और डाकुओं का भय नहीं, दानवों का उपद्रव नहीं, अराजकता नहीं, तो समझना चाहिए राष्ट्र स्थिर है।

इसमें सर्वप्रथम '**सत्यं बृहत्**' अर्थात् महान् सत्य को राष्ट्र का आधार बताया गया है। निःसन्देह सत्य महान् है। सत्य ही सबसे बड़ा धर्म है। (न हि सत्यात् परो धर्मः) शतपथकार ने तो कहा (यत् सत्यं स धर्मः यो धर्मः तत् सत्यम्) अर्थात् सत्य ही धर्म है एवं धर्म ही सत्य है। सत्य ने ही इस पृथ्वी को उठा रखा है। (सत्येनोत्तभिता भूमिः) ऋ० 10.85.1।

प्रश्न होता है—सत्य ने भूमि को किस प्रकार उठा रखा है? **उत्तर**—भूमि या राष्ट्र से अभिप्राय वहाँ की हरी भरी पृथ्वी, खेत, बाग-बगीचे, नदी-नाले या पर्वतों से ही नहीं है। राष्ट्र का मुख्य अभिप्राय तो उस देश में रहने वाले जनसमुदाय से है। यदि थोड़ी देर के लिए हम राष्ट्र से सत्य को विदा कर दें तो उसका पुत्र विश्वास एवं ईमानदारी साथ ही चली जायेगी। ऐसी अवस्था में स्वामी व सेवक का, दुकानदार व ग्राहक का व्यवहार नहीं चल सकता क्योंकि सेवक इसी विश्वास पर महीनाभर तत्परता से कार्य करता है कि मास की समाप्ति पर मुझे आजीविका के लिए द्रव्य प्राप्त हो जाएगा। यदि विश्वास न हो तो सेवक पहले वेतन प्राप्त करने की इच्छा करेगा और स्वामी पहले काम लेना चाहेगा। इस खींचातानी में कोई कार्य न हो सकेगा। सारे राष्ट्र में अव्यवस्था हो जाएगी। इसीलिए कहा गया है कि सत्य ही राष्ट्र का आधार है।

2. '**ऋतं उग्रम्**' उग्र, दृढ़, व्यवस्था, नियम, अनुशासन। राष्ट्र का अनुशासन या भिन्न-भिन्न प्रकार के राष्ट्र को चलाने वाले नियम दृढ़ होने चाहियें। दृढ़ता से उनका पालन किया जाना चाहिये। छोटे से लेकर बड़े नियम तक यदि उसमें ढील दे दी जायेगी तो शनैः-शनैः अव्यवस्था हो जायेगी। चोरी एक बहुत बड़ा अपराध है। प्राचीन युग में चोरी का दण्ड बड़ा उग्र होता था। चोरों को मृत्युदण्ड दे दिया जाता था अथवा हाथ काट दिये जाते थे। इसके लिये शंख और लिखित मुनि की कथा प्रसिद्ध है। यह कथा श्री मैथिलीशरण गुप्त जी के भारत भारती पुस्तक से उद्धृत की गई है, जिसको यहाँ मैं प्रस्तुत करता हूँ—आदर्श पद है-यदि भूलकर अनुचित किसी ने काम कर डाला कभी तो वह स्वयं नृप के निकट दण्डार्थ जाता था तभी अब भी, 'लिखित' मुनि का चरित वह लिखित है इतिहास में। अनुपम सुजनता सिद्ध है जिसके अमल आभास में॥

'शंख' और 'लिखित' नाम के दो भाई थे। वे बड़े तपस्वी और सदाचारी थे। बहुदा नदी के किनारे उन दोनों के जुदा-जुदा आश्रम थे। एक दिन लिखित मुनि अपने बड़े भाई शंख मुनि के आश्रम में पहुँचे। वहाँ के वृक्षों में स्वादिष्ट और मधुर फल लगे हुए थे। शंख मुनि की अनुपस्थिति में लिखित मुनि ने फलों को तोड़कर खाया। जब शंख को यह बात मालूम हुई तब उन्होंने कहा—'भाई, तुमने अच्छा काम नहीं किया। मेरी आज्ञा के बिना मेरे आश्रम के फल क्यों खाये? जो हो, तुम चोरी के अपराध के अपराधी हो। अत एव तुम्हें चाहिए कि तुम राजा के पास जाकर दण्ड की प्रार्थना करो।' बड़े भाई की बात सुनकर लिखित मुनि राजा सुद्युम्न के पास गये और सब हाल सुनाकर बोले कि मैं चोर हूँ, मुझे दण्ड दीजिए। राजा ने कहा—'तुम्हारी सत्यता पर प्रसन्न होकर मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ। जब राजा के दण्ड देने से पाप दूर हो जाता है तब क्षमा कर देने से भी पाप दूर हो जायेगा, जाइए। परन्तु लिखित मुनि न माना निदान उनके दोनों हाथ काट डाले गये। हाथ कटवाकर वे अपने बड़े भाई शंख के पास आये और फिर उनसे क्षमा मांगकर अपने आश्रम में तप करने चले गये।' वर्तमान में काश्मीर राज्य के महाराजा प्रतापसिंह के समय चोरी करने वालों के लिए

क्रमशः पृष्ठ 16 पर......

पौराणिक भाइयों से निवेदन

❑ सूबेदार करतारसिंह आर्य, सेवक आर्यसमाज गोहानामण्डी (सोनीपत)

गतांक से आगे....

उस सेठ के इस अनुरोध को देख स्वामी जी हँसने लगे और उस सेठ से केवल इतना कहा—"सेठ जी! आप यहाँ से चले जाइए।" मूर्तिपूजा का प्रतिवाद करने में स्वामी जी इतने निर्भय, इतने साहसी और इतने पराक्रमी पुरुष थे कि जिस देवमन्दिर में विश्राम करते थे उसी के देवमूर्ति का खण्डन करने को उद्यत हो जाते थे। स्वामी जी अति सरल उज्ज्वल और समीचीन भाव से प्रतिपादित किया करते थे मूर्तिपूजा के समान कोई महामिथ्या वस्तु नहीं है।

काशी शास्त्रार्थ में उनका प्रथम प्रधान पक्ष ही यह था—"पाषाणादि मूर्तिपूजा वेदविरुद्ध है।" पूना में शास्त्रियों के साथ भी उनका प्रधान विचारणीय विषय था कि "मूर्तिपूजा मिथ्या है" सारांश यह है कि घोरतम प्रतिकूलताओं के होने, घोरतम प्रलोभनों के दिये जाने और समय-समय पर शत्रुओं के हाथों अपने प्राणनाश के यत्न किये जाने पर भी मूर्तिपूजा के विरुद्ध प्रचण्ड संग्राम उपस्थित करके उन्होंने भारत की आचार्य मण्डली में अपने लिये विशेष स्थान बना लिया है। इसमें अणुमात्र भी संशय नहीं है कि इस पक्ष में वह अतुल्य, अनुपम और अद्वितीय थे। जैसे मूर्तिपूजा आर्य संस्कृति की प्रधानतम वैरिणी है, वैसे ही मूर्तिपूजा के प्रधानतम वैरी थे। उन्होंने समस्त भारत भूमि में अति उज्ज्वल और प्रबल भाव से इस बात का प्रचार किया कि जब तक मूर्तिपूजा समूल नष्ट नहीं होगी तब तक भारत भूमि का कोई भी कल्याण साधित नहीं हो सकता। इस प्रकार दयानन्द ने जैसी अपनी अपूर्वता और विशेषता की है वैसे इस देश का भी अशेष उपकार किया है। इसलिए ऐसे महात्मा के विकल जीवन वृत्तान्त को भारत की विविध भाषाओं में प्रकाशित करने के यत्न का यह दूसरा हेतु है।

साभार-महर्षि दयानन्द जीवन चरित्र द्वारा
श्री देवेन्द्रनाथ मुखोपाध्याय (भूमिका)

महर्षि दयानन्द उवाच

1. मूर्तिपूजन के लिए वेद में कोई आज्ञा नहीं है और ईश्वर सर्वत्र है, उसे कोई वश में नहीं कर सकता। तुम मूर्तियों को ईश्वर मानते हो और फिर अपने हाथ से ताला

लगाकर उन्हें मन्दिर में बन्द कर देते हो। तुम ही सोचो इनमें ईश्वरीय शक्ति कहाँ है। वे न वर दे सकती हैं और न शाप। जड़मूल हैं। यदि कल्याण चाहते हो तो हृदय में परमात्मा का पूजन करो।

2. मूर्ति जड़ है, इसे ईश्वर मानोगे तो ईश्वर भी जड़ सिद्ध होगा। अथवा ईश्वर के समान एक और ईश्वर मानो तो परमात्मा का परमात्मापन नहीं रहता। यदि यह कहो कि प्रतिमा में ईश्वर आ जाता है तो ठीक नहीं। इससे ईश्वर अखण्ड नहीं सिद्ध हो सकता। भावना में भगवान है। यह कहो तो मैं कहता हूँ कि काष्ठ में इक्षुदण्ड की और लोष्ठ में मिशरी की भावना करने से क्या मुख मीठा हो सकता है। मृगतृष्णा में मृग जल की बहुतेरी भावना करता है, परन्तु उसकी प्यास नहीं बुझती। विश्वास भावना और कल्पना के साथ सत्य का होना भी आवश्यक है।

3. जिस ईश्वर ने मनुष्यों को आँखें आदि इन्द्रियों के लिए सूर्यादि सहायक पदार्थ पैदा किए हैं। यह हो नहीं सकता कि उसने मनुष्य के मस्तिष्क को उज्ज्वल और उन्नत करने के लिये ज्ञान न दिया हो।

4. वैदिक धर्म प्रचार का कार्य बहुत अच्छा है। हम जानते हैं कि हमारे सारे इस जीवन में पूर्ण न हो सकेगा परन्तु चाहे दूसरा जन्म धारण करना पड़े, इस महत् कार्य को अवश्य ही पूर्ण करूँगा।

5. दयानन्द के नेत्र तो वह दिन देखना चाहते थे कि काश्मीर से कन्याकुमारी तक और अटक से कटक तक नागरी अक्षरों का ही प्रयोग और प्रचार हो। मैंने आर्यावर्त भर में भाषा का एक्य सम्पादन करने के लिए ही अपने सकल ग्रन्थ आर्यभाषा में लिखे और प्रकाशित किये हैं।

6. अपनी भाषा में वार्तालाप करना ही उत्तम है। स्वदेशियों में बैठ विदेशी भाषा बोलने लग जाना, भला प्रतीत नहीं होता, प्रत्युत ऐसा करना भद्दा लगता है और इसमें घमण्ड भी प्रकट होता है।

7. हमारा शरीर बहुत देर तक नहीं रहेगा। आप आजीवन हमारी पुस्तकों से सन्देश लेते रहना जहाँ तक बन पड़े अपने भूले भटके भाइयों को भी सन्मार्ग दिखलाते रहना।

दो धाराएँ

❑ यश वर्मा, मन्त्री आर्यसमाज, मॉडल टाउन, यमुनानगर 9416446305

ओ३म् यस्मादृते न सिध्यति यज्ञो विपश्चितश्चन।
स धीनां योगमिन्वति॥

यह ऋग्वेद का मन्त्र है जिसका अर्थ है—जिस प्रकाशक प्रभु के बिना बड़े-बड़े बुद्धिमान् का भी यज्ञ सिद्ध नहीं होता वह प्रभु बुद्धियों के योग में व्याप्त हो जाता है अर्थात् प्रभु के बुद्धियोग से ही सफलता प्राप्त होती है।

हम लोग प्राय: अपनी बुद्धि का अभिमान करते हैं। हमारा कोई भी काम हो, हम यही कहते हैं, मैंने कर दिया। परन्तु सफलता मिलती है प्रभु के बुद्धियोग से। प्रभु ने ही तो हमें बुद्धि दी है और समय-समय पर उस बुद्धि में प्रेरणा भी देता रहता है। कई बार हमें थोड़े-से परिश्रम से बहुत बड़ी सफलता मिल जाती है, वह कैसे, वह प्रभु के बुद्धियोग से ही तो सफलता मिलती है। हमें अपनी बुद्धि प्रभु के अनुकूल बनानी चाहिए उससे अपनी बुद्धि मिलानी चाहिए। जो भी इस संसार में हो रहा है वह प्रभु के बुद्धिबल, योगबल से हो रहा है। प्रभु सत्यमय है इसलिए हम भी सत्य और न्याय के अनुकूल रहें। यदि हम प्रभु के गुण सत्य, न्याय, दया, निर्विकारिता आदि को अपनाते हैं तो हमारा प्रभु से बुद्धियोग है। हम जो भी कर्म करें अपने जीवन में, प्रभु से बुद्धि जोड़कर, नम्र होकर, अहंकार रहित होकर करें ताकि हमारा जीवन एक पके हुए फल के समान हो। पके फल में चार गुण होते हैं—नरम (नम्र), मिठास, गन्ध और रंग। यह गुण आयेंगे हमारे अन्दर बुद्धियोग से। बस हमें थोड़ा-सा विचार करना होगा कि हमें भोगवाद में जीना है या योगवाद में। योगवाद अपनाते हैं तभी तो प्रभु से बुद्धियोग होता है।

मानव जीवन दो धाराओं में बंटा हुआ है। एक है भोगवाद और दूसरा योगवाद। आज सारा देश भोगवाद में फँसा हुआ है। हमारा भारत देश तो अब कुछ वर्षों से इस ओर अधिक झुका है, लेकिन दूसरे देश अमेरिका, रूस, ब्रिटेन, जापान, जर्मनी आदि बहुत से देश तो न जाने कब से भोगवाद में फँसे हुए हैं। भोगवाद में क्या है कि सब कुछ मेरा हो जाए। चाहे वह व्यक्तिगत रूप में है या परिवार, जाति, गांव, नगर, प्रदेश, राष्ट्र, अन्तर्राष्ट्र स्तर पर हो। सब यही चाहते हैं कि मेरे पास अधिक से अधिक हो। इसीलिए भाई-भाई, परिवार, समाज, प्रदेश और राष्ट्रों में लड़ाई-झगड़े हो रहे हैं। सीमाओं पर लड़ाई, पानी के लिए प्रदेशों में लड़ाई, समुद्र के लिए राष्ट्रों में लड़ाई हो रही है। यहाँ तक कि अंतरिक्ष के लिए भी लड़ाई प्रारम्भ हो चुकी है। यह सब भोगवाद का परिणाम है। इससे आती है अशांति, मारकाट, युद्ध, जातिवाद, दुराचार, व्यभिचार। भ्रष्टाचार। महाभारत का युद्ध हो चाहे विश्वयुद्ध हुए, भोगवाद के कारण ही तो हुए हैं। अच्छा बताइए, भ्रष्टाचार क्यों होता है? इसलिए कि दूसरे का धन मेरा हो जाए और मैं इससे भोग के साधन एकत्र कर सकूँ। अरे मानव, जो पांच विषय हैं उनका भोग तो पशु भी करते हैं। प्रभु ने पांचों विषय मनुष्य में दिए और पशु-पक्षी, कीट-पतंगों आदि में भी दिए। यदि ये विषय भोग ही हमारे जीवन का उद्देश्य बना रहा तो पशु-पक्षी और मनुष्य में अन्तर ही क्या रहा जबकि उनकी अपेक्षा मनुष्य को प्रभु ने विचारशील बुद्धि और विचार व्यक्त करने के लिए वाणी दी है। इसलिए मनुष्य का कर्त्तव्य बनता है कि वह विचार करे कि मैं अपने जीवन को किस प्रकार व्यतीत कर रहा हूँ। क्या यही मेरे जीवन का लक्ष्य है या इसके अलावा कुछ और भी है जिसको पाकर मैं अशांति दूर कर सकता हूँ।

भोगवाद के ठीक विपरीत है योगवाद। योगवाद का एक आधार स्तम्भ है, 'तेन त्यक्तेन भुंजीथा' अर्थात् त्याग भाव से भोगो। इसका अर्थ प्राय: हम लोगों ने यह निकाल लिया कि सब कुछ त्याग दो। जबकि वेद कहता है कि खूब धन कमाओ, सोने के बर्तनों में भोजन करो। इन दोनों बातों का सही अर्थ यही है कि धर्मपूर्वक खूब धन कमाओ और फिर त्यागपूर्वक भोगो अर्थात् मिल-बांटकर खाओ। मजदूर को, अपने कर्मचारी को उसका पूरा मेहनताना दो। प्राइवेट हस्पताल का डॉक्टर, स्कूल का मालिक, किसी भी संस्थान का मालिक/प्रबन्धन, सरकार अपने कर्मचारियों को पूरा मेहनताना दे। धार्मिक/चैरिटेबल/सेवा कार्य करने वाली संस्थाओं को अवश्य दें। अपने पास उतना रखें जितनी आवश्यकता हो शेष समाज व राष्ट्रहित में लगाएँ। यह है त्यागभाव से भोगना। और इसके साथ ही प्रभु उपासना को अपने जीवन का अंग बनाना है। सन्ध्या, प्रार्थना, उपासना, सत्संग, स्वाध्याय हमारे जीवन में आ जाएं। हमारा जीवन यज्ञमय हो जाये जैसे प्रभु का यज्ञ हर समय चल रहा है। फिर देखो आप कैसे कर्मयोगी,

ध्यानयोगी, राजयोगी बनते हो। आपके जीवन में सुख, शान्ति, पवित्रता, न्यायकारिता, दयालुता का वास होगा। संसार में रहते हुए आपके पास ऐश्वर्य व श्री अर्थात् यश की कमी न रहेगी।

योगवाद का अर्थ प्राय: हमने यही मान लिया कि घर-बार छोड़कर जंगल अथवा किसी आश्रम में बैठकर, केवल प्रभु का ध्यान करना है। क्या ऐसे यह संसार चल पाएगा। नहीं, कभी नहीं। प्रभु ने मानव को बनाया है पिछले कर्म को भोगने के लिए अर्थात् भोग के लिए और नए कर्म करने के लिए। नए कर्म ऐसे भी हो सकते हैं जिनका फल भोग ही हो और ऐसे भी हो सकते हैं जो हमें मुक्ति तक भी ले जा सकते हैं। अत: यह मानव शरीर भोग व मोक्ष दोनों के लिए मिला है। भोगवाद में तो हम पूर्णतया फंसे हुए हैं, इसलिए हम भोगवाद को कम करते हुए योगवाद की ओर बढ़ें। योग का सही स्वरूप समझें। एक पक्षी को उड़ने के लिए दो डैनों (पंखों) की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार हमें भी भोगवाद व योगवाद दोनों में समन्वय बनाकर अपनाने होंगे। इसी में ही जीवन की सच्ची सफलता है। वैसे तो बहुत सूत्र हैं सफलता के लिए लेकिन यहाँ कुछ सूत्रों का विवरण इस प्रकार है—

1. पूर्वजन्म के उपार्जित संस्कार-पूर्वजन्म के संस्कारों के कारण ही कुछ व्यक्तियों ने 5 वर्ष, 10 वर्ष, 12 वर्ष, 14 वर्ष की अल्पायु में ही घर छोड़ दिए और वे प्रभु की खोज में चल दिए। वे हमारे मार्गदर्शक बन गए। महर्षि दयानन्द, बुद्ध, नानक, महावीर, स्वामी विवेकानन्द आदि कितने ही महापुरुष उदाहरण रूप में हमारे सामने हैं।

2. तीव्र इच्छा-किसी भी कार्य में सफल होने के लिए तीव्र इच्छा का बहुत महत्त्व है। इससे जीवन में संकल्प आता है और जीवन नियमबद्ध हो जाता है।

3. पर्याप्त साधनों की उपलब्धि-प्रारब्ध से अच्छे माता-पिता मिल जाना सबसे प्रथम व उत्तम साधन है उपलब्धि का। प्राय: ऐसा देखा जाता है कि जैसे माता-पिता हैं, वैसे ही सन्तान है। दूसरा है अच्छा गुरु मिल जाना। शिक्षा तो जैसी आजकल मिल रही है वह तो सब हम देख ही रहे हैं। शिक्षक/गुरु/आचार्य ऐसा हो जो स्वयं में एक उदाहरण हो, आचरण करने योग्य हो। आज तो ऐसे गुरु हैं जो लाखों की संख्या में शिष्य बनाए बैठे हैं, परन्तु लोगों को अन्धकार में, पाप-पाखण्ड में धकेल रहे हैं। पढ़े-लिखे लोग भी बिना सोचे-समझे ऐसे गुरुओं के पीछे लग जाते हैं। सत्य ज्ञान को पा ही नहीं रहे।

4. कार्य करने की सही विधि-कार्य करने की सही विधि हो तो लक्ष्य तक सफलता पूर्वक पहुँचा जा सकता है। 4 व्यक्तियों के पास दूध, चावल, चीनी, अग्नि, बर्तन, सब कुछ है परन्तु किसी एक व्यक्ति की खीर सबसे स्वादिष्ट बनती है क्योंकि उसकी विधि सही है। इसी प्रकार योग साधना में भी सही विधि वाले को शीघ्र सफलता मिलती है।

5. पूर्ण पुरुषार्थ-पूर्ण पुरुषार्थ अर्थात् सौ प्रतिशत परिश्रम के पश्चात् ही पूर्ण सफलता मिलती है वरना जैसे किसी विद्यार्थी के 40 प्रतिशत अंक आते हैं और किसी के 90-95 प्रतिशत अंक आते हैं। वैसे ही हमारे जीवन में कोई भी कार्य हम करते हैं, जितना पुरुषार्थ हम करते हैं उतनी ही सफलता मिलती है।

6. घोर तपस्या-अपने लक्ष्य की ओर विघ्न-बाधाएँ आने पर भी सहनशीलता पूर्वक, धैर्य का परिचय देते हुए अग्रसर होना ही घोर तपस्या है। घोर तपस्या से बड़े से बड़े कार्य में भी सफलता मिलती है।

7. वाणी-मधुर वाणी सफलता के लिए एक वरदान साबित होती है। परिवार, समाज और व्यवसाय में मधुरवाणी बहुत कारगर उपाय है सफलता का। कटुवाणी का घाव जीवन भर नहीं भरता। मधुर वाणी वाले से सब मिलना पसन्द करते हैं। वह लोकप्रिय बन जाता है।

हम समय की कद्र करते हुए धैर्यपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करते हुए जिएं तो हमारे जीवन में अवश्य सफलता आएगी। सबके पास 24 घण्टे का समय परमात्मा ने दिया है। यह हमारे ऊपर निर्भर करता है कि हम समय का सदुपयोग करते हैं या दुरुपयोग। यज्ञ, सत्संग, स्वाध्याय, साधना, सेवा भी कर सकते हैं और पिक्चर, टी.वी., अश्लील प्रोग्राम, क्लब, व्यभिचार भी कर सकते हैं। सफल जीवन कौनसा है, यह विचार हमने करना है। हमने भोगवाद में ही जीते रहना है या साथ में योगवाद का समन्यावित जीवन बिताना है ताकि हमारे दु:ख व दु:ख के कारण समाप्त हों और हमें सुख व सुख के साधन मिलें जो कि हमारे मानव जीवन का प्रयोजन है।

हम प्रभु से अपनी बुद्धि को मिलायें जैसे कि ऊपर मन्त्र में कहा गया है। प्रभु को समर्पित होकर सब काम करें। प्रभु का ध्यान साधना करते हुए प्रभु जाप का बांस लगाएँ और शैतानी विचारों को दूर भगाएँ।

आ३म् के ही ध्यान से, और ध्यान से ही योग तक,
जीवन के अन्तिम लक्ष्य तक, यह ओ३म् ही पहुँचाएगा॥

देश को आजाद कराने का मन्त्र किसने दिया?

❑ मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

भारत संसार का सबसे पुराना देश है। इसका पुराना नाम आर्यावर्त था। सृष्टि के आदिकाल में ईश्वर ने तिब्बत में मनुष्यों को उत्पन्न किया था। ईश्वर ने ही इन मनुष्यों को भाषा, सत्यधर्म और संस्कृति के ज्ञान के लिए चार वेदों का

ज्ञान दिया था। ब्रह्मा जी मैथुनी सृष्टि में उत्पन्न प्रथम ऋषि, वेदज्ञ, योगी, ईश्वर व आत्मा के सत्य स्वरूप के जानकार एवं आचार व धर्म शास्त्र के ज्ञाता थे। उन्होंने ही सृष्टि के आरम्भ में अन्य लोगों में वेदों का प्रचार किया था। वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद पढ़कर मनुष्य इस सृष्टि को भली प्रकार से जान व समझ सकते हैं। ऐसा ही हुआ भी था। समय के साथ साथ तिब्बत में मनुष्यों की संख्या में वृद्धि होने लगी और आपस में लड़ाई झगड़े भी होने लगे। उस समय तिब्बत के अतिरिक्त सारी पृथिवी मनुष्यों से शून्य थी। इस कारण उन लोगों में सीधे व सरल स्वभाव के आर्य तिब्बत से सीधे भारत की भूमि में आकर इस भूमि का सर्वोत्तम जानकर यहां बस गये। इससे पूर्व यह पूरी भूमि खाली पड़ी थी। यहां कोई मनुष्य जाति रहती नहीं थी। तिब्बत में रहते हुए आर्यों ने विज्ञान के क्षेत्र में अनेक प्रकार के वायुयान व अन्य वैज्ञानिक उपकरण आदि बना लिये थे। यह लोग अपने अपने वायुयानों में आकाश में भ्रमण करते थे। इन्हें विश्व में जहां जो स्थान जीवन यापन के लिए सुन्दर व अनुकूल जलवायु वाला लगता था, वहां अपने परिवारों व मित्र-संबंधियों को ले जाकर वहां बस्तियां बसा दिया करते थे। इस प्रकार वेद के अनुयायी आर्यों द्वारा तिब्बत से आरम्भ होकर पूरे विश्व में मनुष्यों को बसाया और समय के साथ-साथ नये नये देश व भाषायें आदि बनती गईं। मनुष्योत्पत्ति को हुए 1.96 अरब वर्ष हो चुके हैं। इतनी लम्बी अवधि में भारत के लोग विश्व के अनेक देशों में जाते और बसते रहे और इस प्रकार से विश्व के अनेक देश बसते गये।

भारत की बात करें तो यहां वैदिक धर्म व संस्कृति महाभारत काल व उससे कुछ सौ वर्षों पूर्व तक उन्नति के चरम पर रही है। भारत और विश्व में एक ही धर्म व संस्कृति थी जो वेद पर आधारित थी। पांच हजार वर्ष पूर्व महाभारत का प्रसिद्ध युद्ध हुआ जिसमें बहुत बड़ी संख्या में वीर सैनिकों सहित विद्वान् भी मारे गये। इस कारण भारत में अव्यवस्था फैल गई। शिक्षा का प्रचार व विस्तार बन्द हो गया। समय के साथ लोगों में वेद व धर्म की बातें भी समझने में कृतकार्यता नहीं रही। इस अक्षमता से विश्व में आर्य संस्कृति का प्रचार भी बाधित हुआ। वहां भी अज्ञान व अन्धविश्वास उत्पन्न हो गये। भारत में भी समय के साथ यज्ञों में पशु हिंसा होने लगी। इसका परिणाम बौद्ध व जैन मत का आविर्भाव हुआ। इसके बाद संसार में ईसाई मत का आविर्भाव भी हुआ। इन तीन मतों से पुराना मत पारसी मत था जो एक धार्मिक पुरुष जरदुस्त महाशय ने चलाया था। उन्होंने जो धर्म पुस्तक दी वह जन्दावस्ता के नाम से प्रसिद्ध है। ईसाई मत के बाद इस्लाम मत का उद्भव होता है। यह सभी मत सत्य वेद मत के विलुप्त होने के कारण उत्पन्न हुए। भारत में बौद्ध व जैन मत की स्थापना व आचार्य शंकराचार्य के वैदिक मत के प्रचार से भी अज्ञान, अशिक्षा, अन्धविश्वास, कुरीतियां, सामाजिक असामनता दूर नहीं हुई। वेदों का अल्प ज्ञान ही सीमित संख्या में लोगों में प्रचलित रहा। बाद में सायण आदि कुछ वेदभाष्यकार हुए परन्तु वह वेद के पदों व शब्दों के यथार्थ अर्थों को न जान सके जिस कारण वेदों के सत्य अर्थों का प्रचार होने के स्थान पर मिथ्या अर्थों का ही प्रचार हुआ। इस प्रकार अज्ञान बढ़ता रहा। समाज कमजोर हो गया। तभी सन् 715 ईस्वी में मोहम्मद बिन कासिम ने भारत पर आक्रमण किया। भारत में अन्धविश्वासों और आपसी फूट का परिणाम यह हुआ कि उसने राजा दाहिर को पराजित किया। उसके बाद भारत पर विदेशी लुटेरों के आक्रमण जारी रहे और भारत का बडा भाग गुलाम हो गया। पहले भारत मुसलमानों का और बाद में अंग्रेजों का दास बना।

अंग्रेजों के समय में ऋषि दयानन्द सरस्वती जी का प्रादुर्भाव होता है। सन् 1863 में स्वामी दयानन्द जी ने मथुरा में गुरु विरजानन्द सरस्वती से वेदादि शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर वेदों का प्रचार करने के लिए कार्यक्षेत्र में पदार्पण किया। उस काल में देश में धार्मिक अन्धविश्वास अपनी चरम सीमा पर थे। देश में मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष, मृतक श्राद्ध, जन्मना ऊंच-नीच का व्यवहार करने वाली जाति प्रथा

प्रचलित थी। स्त्री व शूद्रों को वेद और विद्या के अधिकार से वंचित कर दिया गया था। मुस्लिम काल में हिन्दुओं पर अत्याचारों के कारण बाल विवाह व पर्दा प्रथा आरम्भ हो गई थी। ऋषि दयानन्द ने अध्ययन कर पाया कि यह सभी अन्धविश्वास हैं। वेदों से इनका समर्थन नहीं होता। उन्होंने अध्ययन से यह भी पाया कि वेद ही स्वत: प्रमाण धर्म व संस्कृति सहित ज्ञान विज्ञान के ग्रन्थ हैं। उन्होंने अज्ञान व अन्धविश्वासों का खण्डन और वैदिक सत्य मान्यताओं का मण्डन प्रमाणों व युक्तियों आदि से किया। वह देश भर में घूमे और सर्वत्र वैदिक सत्य मान्यताओं का प्रचार किया। लोग मूर्तिपूजा और अन्य अन्धविश्वासों को छोड़ने लगे और अज्ञान व अविद्या सहित कुप्रथाओं से मुक्त एक नया भारत अस्तित्व में आने लगा। इसके साथ ही ऋषि दयानन्द ने अज्ञान व अविद्या को दूर करने के लिए 'सत्यार्थप्रकाश' ग्रन्थ की रचना की। ऋषि दयानन्द ने देश की गुलामी व उसके कुपरिणामों को गहराई से देखा व अनुभव किया था। उन्होंने देश की आजादी का समर्थन किया। उनके प्राय: सभी ग्रन्थों सहित वेदभाष्य में प्रकट विचारों से देश की आजादी का समर्थन होता है। सत्यार्थप्रकाश के दो संस्करण प्रकाशित हुए। पहला सन् 1874 में तैयार हुआ। दूसरा उन्होंने सन् 1883 में तैयार किया जो उनकी मृत्यु के बाद सन् 1884 में प्रकाशित हुआ। इस ग्रन्थ में देश की गुलामी का विरोध और आजादी का समर्थन करते हुए उन्होंने जो शब्द कहे वह स्वर्णिम अक्षरों में लिखने योग्य हैं। सत्यार्थप्रकाश आठवें समुल्लास में उन्होंने निम्न शब्द लिखे हैं—ब्रह्मा का पुत्र विराट्, विराट् का पुत्र मनु, मनु का मरीच्यादि दश इनके स्वायम्भुवादि सात राजा और उन के सन्तान इक्ष्वाकु आदि राजा जो आर्यावर्त के प्रथम राजा हुए जिन्होंने यह आर्यवर्त बसाया है।

अब अभाग्योदय से और आर्यों के आलस्य, प्रमाद, परस्पर के विरोध से अन्य देशों के राज्य करने की तो कथा ही क्या कहनी किन्तु आर्यावर्त में भी आर्यों का अखण्ड, स्वतन्त्र, स्वाधीन, निर्भय राज्य इस समय नहीं है। जो कुछ है सो भी विदेशियों के पादाक्रान्त हो रहा है। कुछ थोड़े राजा स्वतन्त्र हैं। दुर्दिन जब आता है तब देशववासियों को अनेक प्रकार का दु:ख भोगना पड़ता है।

कोई कितना ही करे परन्तु जो स्वदेशीय राज्य होता है वह सर्वोपरि उत्तम होता है। अथवा मत-मतान्तर के आग्रहरहित अपने और पराये का पक्षपातशून्य प्रजा पर पिता माता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायक नहीं है। परन्तु भिन्न भिन्न भाषा, पृथक्-पृथक् शिक्षा, अलग व्यवहार का विरोध छूटना अति दुष्कर है। विना इसके छूटे परस्पर का पूरा उपकार और अभिप्राय सिद्ध होना (देश स्वतन्त्र होना और सर्वत्र वेद का प्रचार होना) कठिन है। इसलिए जो कुछ वेदादि शास्त्रों में व्यवस्था वा इतिहास लिखे हैं उसी का मान्य करना भद्रपुरुषों का काम है।

देश को आजाद कराने की प्रेरणा करने वाले यह विचार ऋषि दयानन्द ने सन् 1883 में दिये थे। उस समय देश में आजादी की कहीं चर्चा कोई नहीं करता था। रूस व चीन में क्रान्ति नहीं हुई थी। कांग्रेस की स्थापना भी सन् 1885 में इसके बाद हुई। ऋषि दयानन्द ने देश को आजाद कराने की प्रेरणा न केवल सत्यार्थप्रकाश में ही की है अपितु अपने अन्य ग्रन्थ आर्याभिविनय, संस्कृतवाक्यप्रबोध सहित वेदभाष्य में वेदमन्त्रों की व्याख्या करते हुए भी की है। इससे ऋषि दयानन्द देश को आजादी का मन्त्र व विचार देने वाले पहले महापुरुष थे। देश ने उनको उनका उचित स्थान न देकर उनसे न्याय नहीं किया है। यह भी बता दें की क्रान्तिकारी विचारों के शीर्ष महापुरुष पं. श्यामजीकृष्ण वर्मा उन्हीं के साक्षात् शिष्य थे। गांधी जी के गुरु गोपाल कृष्ण गोखले महादेव रानाडे के शिष्य थे और रानाडे जी महर्षि दयानन्द जी के सहयोगी व शिष्य थे। आर्यसमाज के सभी अनुयायी भी देश को आजाद कराने की तीव्र भावना रखते थे। स्वामी जी के अनुयायी स्वामी श्रद्धानन्द, भाई परमानन्द, पं. रामप्रसाद बिस्मिल सहित देश के अनेक विचारक स्वामी दयानन्द जी के विचारों से प्रभावित थे। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि देश को आजादी का विचार व मन्त्र सबसे पहले स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने ही दिया था। स्वामी जी की मृत्यु एक गुप्त षड्यन्त्र का परिणाम थी। उसमें स्वामी जी के अंग्रेज सरकार विरोधी इस प्रकार के विचारों का भी योगदान था। स्वामी दयानन्द जी ने सन् 1874 में लिखे सत्यार्थप्रकाश में भी अंग्रेज सरकार द्वारा नमक पर कर लगाने के विरोध में टिप्पणी की थी। अत: देश की आजादी का श्रेय महर्षि दयानन्द को है। राजनीतिक दल सत्य को कितना ही छुपा लें, लेकिन सत्य सत्य ही रहता है और यह तथ्य है कि देश को आजाद करने का सबसे पहले विचार व मन्त्र ऋषि दयानन्द जी ने ही देशवासियों को दिया था। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

सत्य सिद्धान्तों से एकता

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

सत्य से न्याय होता है। न्याय ही विवाद का हल है। असत्य विवाद का कारण है और असत्य से विवाद का हल भी नहीं निकल सकता। पीड़ित को न्याय मिले बिना हल कैसा? मत-पन्थ का विवाद भी सत्य के ग्रहण और असत्य

को छोड़ने से ही मिट सकता है। मत-पन्थ के विवाद से जगत् का जो अहित होता है उसे दूर करने का सिद्धान्त 'सत्यार्थप्रकाश' की भूमिका में इस प्रकार दिया है, "जो-जो बातें सबके अनुकूल सब में सत्य हैं उनका ग्रहण और जो एक-दूसरे से विरुद्ध बातें हैं, उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से वर्तें वर्तावें तो जगत् का पूर्ण हित होवे।" और भी लिखा है, "जो-जो सब मतों में सत्य-सत्य बातें हैं, वे-वे सब में अविरुद्ध होने से उनका स्वीकार करके जो-जो मत-मतान्तरों में मिथ्या बातें हैं, उन-उनका खण्डन किया है।" ऋषि जी ने स्पष्ट किया है कि सत्योपदेश के बिना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।

सिद्धान्तों की असत्य व्याख्या से वाद-विवाद तथा उनकी सत्य व्याख्या से एकता होती है, इस तथ्य को निम्न विषयों के आलोक में देखेंगे—

1. 'देवता' शब्द के अर्थ का सार्थक प्रयोग करने से एकमत संभव है। आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथिवी जड़ देवता हैं, माता-पिता, आचार्य, अतिथि, परस्पर पति-पत्नी चेतन देवता हैं। ये सभी जड़ व चेतन देवता ज्ञान व जीवन देने वाले हैं। ये सब मनुष्यों के लिए देवता हैं। 'यज्ञ' द्वारा जड़ देवताओं को हवि प्रदान करके उनसे लाभ लेना तथा आदर-सत्कार, सेवा, अन्न, वस्त्र आदि से चेतन देवताओं की पूजा कर उनसे लाभ लेना, पुण्य कमाना, यह प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है। इन सबसे बड़ा देवों का देव महादेव वह चेतनस्वरूप एक ही है। वर्तमान में कांग्रेस के अध्यक्ष श्री राहुल गांधी कहते हैं कि मठ, मन्दिर, मस्जिद, गुरुद्वारों, गिरिजाघरों की यात्रा की। इन्होंने बाद में बयान दिया कि भगवान् तो सर्वत्र है। ऐसे बयान पूर्णतया भ्रमोत्पादक होते हैं। इस संदर्भ में यह तो आप कह सकते हैं कि भगवान् अनेक हैं और यथास्थान अपनी-अपनी मान्यताओं के अनुसार स्थापित हैं। प्रचलित मान्यताओं के अनुसार आपका इस प्रकार का कथन तो सत्य होता और हम उसकी विवेचना करते। यह विडम्बनापूर्ण है कि आप लोग जानकर भी अनजान बनते हैं। क्या आप लोगों को इतना भी नहीं पता कि इन अलग-अलग तथाकथित भगवानों के गुण-कर्म-स्वभाव भी अलग-अलग हैं। यहीं असली-नकली की पहचान हो जाती है। जब भगवान् को एक व सर्वत्र मानते हो तो उसके ज्ञान, सत्ता, न्याय, गुण-कर्म-स्वभाव में विभेद क्यों करते हो? क्या मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर वाली मान्यताओं के अनुसार सबके भगवान् अलग-अलग गुण-कर्म-स्वभाव व भिन्न ज्ञान, सत्ता व न्याय वाले नहीं हैं? फिर आप व आप जैसे लोग ऐसी टिप्पणियाँ क्यों करते हो? इस प्रकार की टिप्पणियों से जिस प्रकार मत-पन्थ वाले लोगों को भ्रमित करके उनके तन-मन-धन का शोषण करते हैं, उसी प्रकार वोट के लिए आप लोग करते हैं।

कुछ दिन पहले दूरदर्शन पर उत्तर प्रदेश के मुख्यमन्त्री श्री योगी आदित्यनाथ ने एक साक्षात्कार में एक प्रश्न के उत्तर में कहा कि निरपेक्षता शब्द मत-पन्थ के साथ तो लगा सकते हैं, धर्म के साथ नहीं। उन्होंने इस विषय पर विचार विमर्श कराने का भी प्रस्ताव रखा। जब इतना और इससे भी बढ़कर इन विषयों पर सत्य बोलने का साहस नेता लोग करें तो ईश्वर, धर्म विषयक विवाद मिटकर समाज का कल्याण हो। वैदिक सिद्धान्तों से ही एकमत सम्भव है।

2. 'तीर्थ' के अर्थ न जानकर और इसका सार्थक प्रयोग न करने से भी अनेक प्रकार के बखेड़े खड़े हो गए हैं। अपनी-अपनी मान्यताओं के अनुसार अलग-अलग तीर्थ मानने वालों का तो विवाद होता ही है, समान मानने वालों का भी विवाद होता है, क्योंकि यहाँ सत्य दोनों ओर ही नहीं है। एक ही मान्यता वाले 'स्नान' के नाम पर लड़ मरते हैं। कोई पानी में डूब मरता है, कोई 'शैतान' को मारते हुए मरता है। सत्यार्थप्रकाश के अनुसार तो विद्या पढ़ना, माता-पिता की सेवा, ब्रह्मचर्य आदि शुभ कर्म ही तीर्थ हैं जो दुःखों से तैरा=छुड़ा देते हैं। ये मनुष्य मात्र के लिए एक व कल्याणकारी हैं। इसी प्रकार अन्य विषयों को सत्य के आलोक में देखकर, समझकर, अपनाकर मनुष्य समाज में एकता व सुख संभव है। सत्य को न पहचान कर इन विषयों के संदर्भ में 'अनेकता में एकता' का नारा मात्र स्वार्थ व खोखलेपन का परिचायक है।

आर्यसमाज के महान्..... पृष्ठ 7 का शेष....

किया। जम्मू में अपनी जान जोखिम में डालकर वहाँ के अस्पृश्य लोगों की बहुत सेवा की।

निजाम हैदराबाद से टक्कर लेने के लिए आपको इस संग्राम का फील्ड मार्शल बनाया गया। महात्मा नारायण स्वामी जी ने श्री स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज द्वारा इस धर्मयुद्ध के संचालन के बारे में लिखा है, "सत्याग्रह का संचालन इतनी उत्तमता से हुआ कि इस देश में सबका ध्यान उसकी ओर आकर्षित ही नहीं हुआ, अपितु इग्लैण्ड में भी उसका प्रभाव पहुँचा और चार बार इंग्लैण्ड की संसद में प्रश्न पूछे गये।" मलेर कोटला के नवाब से टक्कर ली और उसे धूल चटाई। देश विभाजन से पूर्व ब्रिटिश सरकार ने समालखा जिला करनाल में बूचड़खाना खोलने का निर्णय लिया। शूरता की शान स्वामी जी के सामने सरकार को झुकना पड़ा और बूचड़खाना खोलने का निर्णय वापिस लेना पड़ा। सरकार ने लाहौर में और पठानकोट में भी बूचड़खाना खोलने का निर्णय लिया परन्तु स्वामी जी के प्रचण्ड आन्दोलन को देखते हुए उसे वापिस लेना पड़ा। लाहौर में सत्यार्थप्रकाश के विरुद्ध दो अभियोग चलाये। आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब ने स्वामी जी के सहयोग से इस अभियोग को लड़ा और न्यायालय में आर्यसमाज ही विजयी रहा।

साहित्य सेवा-स्वामी जी की दिनचर्या को देखकर सभी लोग दंग रह जाते थे। वे सदा कुछ न कुछ वेद प्रवचन, व्याख्यान, शंका-समाधान, स्वाध्याय तथा लेखन कार्य में लगे रहते थे। कुछ ग्रन्थ इस प्रकार हैं—

1. **आर्यसमाज के महाधन**-आर्यसमाज के हुतात्माओं पर इस पुस्तक का प्रकाशन सार्वदेशिक सभा ने करवाया था।

2. **आर्य सिद्धान्त तथा सिख गुरु**-विदेशी शासकों ने जब स्वामी को दीनानगर में स्थानबद्ध किया तो इस ग्रन्थरत्न को लिखा गया। हिन्दी व गुरुमुखी दोनों भाषाओं में प्रकाशित हुई।

3. **वेदों की इयत्ता**-यह पुस्तक समुद्री यात्रा में लिखी गई।

4. **स्वतन्त्रानन्द लेखमाला**-प्रिं० रामचन्द्र जी जावेद ने स्वामी जी के विविध विषयों पर कुछ महत्त्वपूर्ण लेखों का संग्रह कर पंजाब प्रतिनिधि सभा से प्रकाशित करवाया।

5. **इतिहास दर्पण**-इस अनुपम पुस्तक में आर्यसमाज के 40 से ऊपर संन्यासियों, हुतात्माओं व सेवकों पर स्वामी जी के दुर्लभ लेख दिये गये हैं।

6. गुरुमुखी सत्यार्थप्रकाश तथा कई और महत्त्वपूर्ण पुस्तकें तैयार की परन्तु उनका प्रकाशन न हो सका।

शरीर त्याग/देहावसान-1953 में सार्वदेशिक सभा ने हैदराबाद में एक महासम्मेलन बुलाया। गोहत्या का कलंक निवारण करने के लिए आर्यजनता ने पूज्य स्वामी जी को सर्वाधिकारी चुना। इस कार्य में दिन-रात एक करने के कारण पूज्य स्वामी जी रुग्ण हो गये और अन्ततः 3 अप्रैल 1955 चैत्र सुदी 11, 2012 विक्रमी संवत् को आपका बम्बई में देहावसान हो गया। वे गोधन की रक्षा के लिए वीरगति पा गये।

आर्यसमाज ही नहीं, समूचा भारत देश व मानव समाज सदैव उनका ऋणी रहेगा। आज चाहे उनका भौतिक शरीर इस संसार में विद्यमान नहीं है परन्तु उनका यशरूपी शरीर सदैव हमें प्रेरणा देता रहेगा। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि इस प्रकार के विरक्त साधु-रत्न समय-समय पर भारत को प्रदान करता रहे।

स्वर्ग कहाँ ?....... पृष्ठ 3 का शेष.......

अर्थात् आठ चक्रों और नौ द्वारों वाली इन्द्रिय रूप देवों की नगरी अयोध्या नाम वाली है। ब्रह्मचर्य आदि के पालन से सुरक्षित यह नगरी कामादि शत्रुओं से अपराजित है। इस नगरी में एक ज्योतिर्मय कोष (हृदय) है जो ब्रह्म के प्रकाश से प्रकाशित है जिसमें ध्यान करने से साधक को स्वर्ग की प्राप्ति होती है।

वेद के उपरोक्त मन्त्रों की विशेषता तो इसी में है कि कर्त्तव्य की इस विविधता में भी स्वर्गद्वार सबके लिए समान रूप से खुला है। स्वर्ग के लिए हृदय की पवित्रता की शर्त है। स्वर्ग-नरक की यह शृंखला बहुत विस्तृत है। लेख के विस्तारभय से हमें इतना तो अवश्य ही जान लेना चाहिए कि गृहस्थ आश्रम ही स्वर्ग का स्थान है। इसलिए इसको समझदारी से चलाना सुख का हेतु है अन्यथा महान् दुःखों का कारण भी बन जाता है।

राष्ट्र के मुख्य छः आधार...... पृष्ठ 8 का शेष.......

अति कठोर दण्ड था। एक यात्री नदी के किनारे अपने रुपयों की थैली भूल गया जिसमें सौ के लगभग रुपये थे। पीछे से आने वाले एक दूसरे यात्री ने सूने में पड़ी हुई थैली को उठा लिया और चलता बना। पहले यात्री को लगभग 10 मील यात्रा करने के बाद अपनी थैली का ध्यान आया। वह तेजी से वापस लौटा। सारे मार्ग में देखता आया तथा नदी पर आकर उसने विशेष रूपेण खोज की। थैली न मिलने पर वह पास के ग्राम में गया। वहाँ के नम्बरदार या सरपंच से थैली के गुम हो जाने की बात कही। ग्रामवासियों से पूछताछ की गई पर कुछ पता न चला। अन्त में नम्बरदार ने सुझाव दिया कि यदि तुम शीघ्रता से महाराज के पास पहुँच सको तो सम्भव है तुम्हारा रुपया मिल जावे। गरीब यात्री महाराज प्रतापसिंह जी के पास गया और अपनी सारी कहानी कह सुनाई। महाराज ने तत्काल सिपाहियों को बुलाकर आज्ञा दी कि अपराधी की जल्दी से जल्दी खोज करो। आज से दो दिन बाद मैं भी ग्राम पहुँचूँगा। तब तक अपराधी पकड़ा जाना ही चाहिये। सिपाहियों ने कमर कस लिया। घुड़सवार दौड़ाये गये। अपराधी पकड़ लिया गया। यथासमय महाराज भी उपस्थित हो गये। अपराधी को पेश किया गया। महाराज ने पूछा—'तुमने थैली क्यों उठाई ?' 'श्रीमन्! सूने में पड़ी थी, मैंने उठा ली।' 'क्या तुम्हारी थी ?' महाराज ने दूसरा प्रश्न किया। 'नहीं, अन्नदाता मेरी तो नहीं थी।' 'जब तुम्हारी नहीं थी, तुमने क्यों उठा ली ?' तुम्हारे इस अपराध के कारण रुपयों के मालिक को, राजकीय कर्मचारियों को तथा मुझे कितना कष्ट हुआ। इसका अनुमान तुम नहीं लगा सकते। और आज्ञा हुई कि अपराधी के हाथ काटकर पास के बड़े नगर के प्रधान द्वार पर खड़ा कर दिया जाये और एक सिपाही आने जाने वालों को बताता जाये कि इसे चोरी के अपराध में यह दण्ड मिला है। ऐसी उग्र व्यवस्था होने पर भला कौन चोरी कर सकता है।

3. दीक्षा-राष्ट्र का तीसरा आधार है। दीक्षा का अर्थ यहाँ दृढ़संकल्प है। राष्ट्र का एक-एक व्यक्ति अपने-अपने कर्त्तव्य के पालन में दृढ़संकल्प हो। चारों वर्ण, चारों आश्रम सभी राष्ट्र की प्रगति के लिए दृढ़संकल्प होकर कार्य करें।

क्रमशः अगले अंक में......

समाचार-प्रभाग

नवसंवत्सर व आर्यसमाज स्थापना दिवस सम्पन्न

वेदप्रचार मण्डल रेवाड़ी के अध्यक्ष महात्मा यशदेव जी द्वारा नवसंवत्सर व आर्यसमाज स्थापना दिवस के पावन पर्व पर एक दिवसीय प्रथम आर्य सम्मेलन का आयोजन राव पूनमचन्द समारोह स्थल जैनाबाद जिला रेवाड़ी में रखा गया। इस अवसर पर रेवाड़ी व महेन्द्रगढ़ के आर्यजनों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया व कार्यक्रम को सफल बनाने में अपना तन-मन-धन से पूर्ण सहयोग दिया। कार्यक्रम में श्री लाखन सिंह आर्य मथुरा, पं० सुन्दरलाल वैदिक सिरियानी, महाशय बंसीराम कलवाड़ी, रामौतार पुरुषार्थी बिहाली, प्रदीप डागर हरयाणा राज्य युवा प्रभारी पतंजलि, जसवन्त कुमार आर्य मंत्री वेदप्रचार मण्डल जिला रेवाड़ी, डॉ० नरेन्द्र शास्त्री जिला प्रभारी आर्यवीर दल रेवाड़ी, ब्रह्मचारी आशीष आर्य गुरुकुल वृंदावन, कैप्टन जगराम आर्य नारनौल, कप्तान रामसिंह आर्य गाहड़ा आदि ने नवसंवत्सर, आर्यसमाज, ऋषि दयानन्द व वेद की मान्यताओं, कन्या भ्रूणहत्या, देहजप्रथा व समाज में बढ़ते अन्धविश्वास व पाखण्ड पर विस्तार से अपने विचार भजन व प्रवचनों के माध्यम से रखे। अन्त में समारोह स्थल के संचालक कुलदीप आर्य ने सभी का हार्दिक स्वागत किया।

निर्वाचन

आर्यसमाज बीकानेर गंगायचा अहीर जिला रेवाड़ी का चुनाव दिनांक 11 मार्च, 2018 को आर्यसमाज के प्रांगण में सम्पन्न हुआ जिसमें सर्वसम्मति से डॉ० महेन्द्र सिंह आर्य को प्रधान, प्रिंसिपल रामेहर आर्य मंत्री व प्रो० धर्मवीर नम्बरदार को कोषाध्यक्ष चुना गया। नवनिर्वाचित पदाधिकारियों ने आर्यसमाज के कार्यों को अधिक गति देने का संकल्प लिया।

—कमल सिंह आर्य, अन्तरंग सदस्य,
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा दयानन्दमठ रोहतक

आर्यसमाजों के उत्सवों की सूची

1. आर्यसमाज झज्जर शहर — 1 अप्रैल 2018
2. स्त्री आर्यसमाज बालधनकलां (रेवाड़ी) — 5 से 6 मई 2018
3. आर्यसमाज सिहोर (महेन्द्रगढ़) — 7 से 8 मई 2018

—रमेश आर्य, सभा वेदप्रचाराधिष्ठाता

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में मुख्य अतिथि सभा प्रधान मा० रामपाल आर्य अपने विचार रखते हुए।

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में स्वामी आशुतोष जी अपने विचार रखते हुए।

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में सभा मंत्री श्री उमेद सिंह शर्मा अपने विचार रखते हुए।

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में डा० सुरेन्द्र कुमार अपने विचार रखते हुए।

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में सभा प्रस्तोता आचार्य सर्वमित्र आर्य अपने विचार रखते हुए।

वैदिक ज्ञान प्रसार न्यास द्वारा नव संवत्सर पर आयोजित यज्ञ में उपस्थित आर्यजन।

आर्य समाज अम्बाला छावनी में आयोजित समारोह में दीप प्रज्वलित करते हुए महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी।

आर्य समाज अम्बाला छावनी में आयोजित समारोह में महामहिम राज्यपाल आचार्य देवव्रत जी को सम्मानित करते हुए आर्य समाज के पदाधिकारी।

स्वामी दयानन्द सरस्वती

ओ३म्

प्रान्तीय आर्य वीर दल शिविर

आचार्य बलदेव जी

03 जून 2018 से 10 जून 2018

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्द मठ, रोहतक

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के तत्त्वावधान में प्रान्तीय आर्य वीर दल शिविर का आयोजन किया जा रहा है। आर्य समाज शिविरों के माध्यम से युवाओं को नशामुक्ति, चरित्र निर्माण, वैदिक संस्कार, ब्रह्मचर्य शिक्षा, राष्ट्रसेवा की भावनाओं को भरकर अनुशासित जीवन जीने की प्रेरणा देता है। अत: आप सभी से निवेदन है कि इस दूषित वातावरण में अपनी सन्तानों को सुसंस्कार देना चाहते हैं तो आप अपने बच्चों को इस शिविर में जरूर भेजें।

आवश्यक सामान 2 खाकी हॉफ पेन्ट, 2 सफेद सैण्डो बनियान, सफेद जूते, 2 सफेद मौजे, 2 लंगोट, लाठी, कॉपी-पेन हल्का बिस्तर, थाली, चम्मच, गिलास एवं अन्य दैनिक उपयोगी सामान।

नोट
- शिविरार्थियों को 03 जून को प्रात: 9 बजे तक शिविर स्थल पर पहुंचना अनिवार्य है।
- अपने साथ मोबाइल, कैमरा एवं अन्य कीमती सामान साथ न लाएं।
- शिविर में पूर्ण अनुशासन में रहना होगा अन्यथा उसे शिविर से पृथक् कर दिया जाएगा।

प्रवेश शुल्क
300 रु/- (दो पासपोर्ट साइज फोटो साथ लाएं।)
शिविर केवल 13 से 20 वर्ष के लड़को के लिए है।

निवेदक : आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा, दयानन्द मठ, रोहतक 08199938001, 9416503513

Postal Regn. - RTK/010/2017-19
RNI - HRHIN/2003/10425

प्रेषक :
मन्त्री
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्द मठ, रोहतक
हरियाणा, 124001

श्री ....

पता ....

....

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा (रजि.) के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक उमेद शर्मा ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स के लिए आचार्य प्रिंटिंग प्रेस, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ रोहतक-124001 से प्रकाशित।

- सम्पादक उमेद शर्मा